छत्तीसगढ़ में तिवड़ा की खेतीः अनुसंधान और भविष्य की संभावनाएँ

सुरेन्द्र घृतलहरे[1], आलोक कुमार[1], दिबेन्दु दत्ता[1], अमित भटोरे[1]

सारांश

तिवड़ा (लाखड़ी) छत्तीसगढ़ की प्रमुख दलहनी फसल मे से एक है। धान के बाद, क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे अधिक रकबा इस फसल के अन्तर्गत आता है। धान आधारित कृषि में इस फसल की अहम् भूमिका है। सीमित पानी एवं अन्य संसाधन होने पर भी तिवड़ा को उतेरा विधि द्वारा अच्छे से खेती किया जा सकता है जहां पर अन्य दलहनी फसल नहीं हो पता वहां पर भी तिवड़ा अच्छे से हो जाता है। तिवड़ा की दाल के साथ–साथ इसके कोमल पत्तियों को भी सब्जी के रूप बहुत पसंद किया जाता है और इसको सूखा कर भी रखा जाता है। इसमे प्रोटीन के साथ–साथ अन्य उपयोगी पोषक तत्व पाए जाते हैं।

शब्द कुंजीः खेसारी दाल, पत्ता–सब्जी, प्रोटीन, दालें।

Cultivation of Grasspea in Chhattisgarh: Research and Future Prospects

Surendra Ghritlahre[1], Alok Kumar[1], Dibendu Datta[1], Amit Bhatore[1]

10.18805/BKAP593

ABSTRACT

Grasspea (Lathyrus) is one of the major pulse crops of Chhattisgarh. After rice, in terms of area, the maximum area comes under this crop. This crop has an important role in rice based agriculture. Despite having limited water and other resources, grasspea can be cultivated well by Utera method, where there are no other pulse crops, grasspea grows well. Along with grasspea pulse, its soft leaves are also very much liked as a leaf-vegetable and it is also kept dry. Along with protein, other useful nutrients are found in it.

Key words: Grasspea, Leaf-vegetable, Protein, Pulse.

वैश्विक जलवायु परिवर्तन की दौर मे, खाद्य सुरक्षा और कृषि स्थिरता को लेकर गंभीर आशंका के कारण, कम उपयोग वाले फसल का अन्वेषण तथा महत्व बढ़ा है। कम उपयोग वाले फसल तिवाड़ा (लैथिरस सैटिवस एल.) जो पोषक तत्वों से भरपूर होने के साथ–साथ, प्रतिकूल वातावरण तथा कम इनपुट मे भी बेहतर उपयोगी होता है (Arslan, 2017)। तिवड़ा को खेसारी या लाकड़ी के नाम से भी जाना जाता है। यह फसल सूखा, अधिक नमी, अत्यधिक तापमान या ठंड सहनशील होने की वजह से सूखे या नमी की स्थिति मे भी बेहतर उपज देने की अनोखी अनुकूलन क्षमता (Lambein *et al.*, 2019) रखती है। इसके अलावा, इसे लवणीय मिट्टी और अन्य प्रतिकूल–मिट्टी संबंधित जलवायु स्थितियों में भी जहा पोषक तत्वों की कमी या भारी धातु अभिवृद्धि होती है (Ahmed *et al.*, 2014)। तिवड़ा की खेती मुख्य रूप से छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार, झारखण्ड और पश्चिम बंगाल, विशेष रूप से (रिले फसल) के रूप में कि जाती है। देश के कुछ राज्यों में तिवड़ा की खेती प्रतिबंधित होने की वजह से इसके उत्पादन संबंधी सटीक आंकड़े, उपलब्ध नहीं हैं। देश में इसकी खेती 0.5 मिलियन हेक्टेयर के क्षेत्र में होने का अनुमान है, जिसका 75–80% केवल छत्तीसगढ़ में है। यह देखा गया है कि जिन क्षेत्रो में, रबी फसलों को सिंचाई की सुविधा प्राप्त हुई है, वहाँ तिवड़ा का क्षेत्र घट रहा है और इसी वजह से तेजी से आनुवंशिक क्षरण हो रहा है। इस प्रकार, यह एक प्रमुख

[1]ICAR-Indian Institute of Pulses Research, Regional Station, Phanda, Bhopal-462 030, Madhya Pradesh, India.

Corresponding Author: Surendra Ghritlahre, ICAR-Indian Institute of Pulses Research, Regional Station, Phanda, Bhopal-462 030, Madhya Pradesh, India. Email: surenpb2008@gmail.com

How to cite this article: Ghritlahre, S., Kumar, A., Datta, D. and Bhatore, A. (2023). Cultivation of Grasspea in Chhattisgarh: Research and Future Prospects. Bhartiya Krishi Anusandhan Patrika. 38(2): 112-115. doi: 10.18805/BKAP593.

Submitted: 13-09-2022 **Accepted:** 05-04-2023 **Online:** 11-05-2023

चिंता का विषय है कि जो भी तिवड़ा फसल में विविधता उपलब्ध है, उसे संग्रहित कर संरक्षित करें। राष्ट्रीय पादप आनुवंशिक संसाधन ब्यूरो (NBPGR)– नई दिल्ली, भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान (IIPR)– कानपुर का क्षेत्रीय केन्द्र भोपाल और इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय (IGAU)– रायपुर, आनुवंशिक संसाधनों के संरक्षण और उच्च उपज के साथ कम विषाक्त (निम्न ओडेप) किस्मों का विकास करने में प्रयासरत हैं।

तिवड़ा छत्तीसगढ़ की प्रमुख दलहनी फसल है। अधिकतम रबी दलहनी क्षेत्र (0.352 मिलियन हेक्टेयर) को कवर करने वाला राज्य अर्थात राज्य में कुल रबी दलहन का 44.34% होता है (Ambade *et al.*, 2015)। इसके हरी–पत्ती व फलियों का सब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है। फसल का भूसा पशुओं के लिए अच्छा आहार है। राज्य के करीब 3.50 लाख हेक्टेयर में इसकी खेती हो रही है। सालाना करीब 212 मीट्रिक टन का उत्पादन हो रहा है। क्षेत्रफल के हिसाब से धान के बाद सबसे अधिक रकबा तिवड़ा का है।

तिवड़ा (लेथाइरस) में आनुवंशिक संसाधन गतिविधियाँ

जर्मप्लाज्म की स्थितिय एनबीपीजीआर, नई दिल्ली ने एक नोडल संगठन के रूप में तिवड़ा के स्वदेशी और विदेशी संग्रह को, भारत में फसल सुधार कार्यक्रम में उपयोग करने के लिए संवर्धित किया है। वर्तमान में 2563 जर्मप्लाज्म एकसेशन संग्रहित हुए हैं जो कि दीर्घकालिक भंडारण के तहत जीनबैंक में संरक्षित है। इनके अलावा, सक्रिय संग्रहय एनबीपीजीआर –क्षेत्रीय स्टेशनों, आईआईपीआर –कानपुर और आईजीकेवी –रायपुर (तालिका 1) में है।

निम्न ओडेप किस्मों का विकास

पारंपरिक प्रजनन और जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से बड़ी संख्या में निम्न ओडेप उपभेदों को विकसित किया गया है। जैव प्रौद्योगिकी के परिणामस्वरूप, भारत में सामान्य खेती के लिए प्रजाति रतन (BioL–212) का विमोचन किया गया है। हालांकि, बीज–प्रगुणन के लिए निम्न ओडेप वाली किस्मों का वितरण छत्तीसगढ़, बिहार और महाराष्ट्र में किया जा रहा है, फिर भी नए लोगों द्वारा स्थानीय किस्मों के उत्पादन, बीज–प्रगुणन और बीज–प्रतिस्थापन को प्राथमिकता पर लिया जाना चाहिए। चूँकि, तिवड़ा में ओडीएपी यौगिक कि मात्रा अलग–अलग परिस्थितीयों में दिखाई देती हैं अंतः इस दशा में कम ओडीएपी सामग्री वाली प्रजाति का विकास करने के लिए लगातार प्रयास होने चाहिए।

भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान– कानपुर तथा इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय– रायपुर के कृषि वैज्ञानिको द्वारा तिवड़ा पर शोधकार्य किया जा रहा है और इसके विषैले तत्व (ओडेप) को कम करने के लिए लगातार प्रयास किया जा रहा हैं। इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय– रायपुर द्वारा तिवड़ा की दो नई किस्मे महातिवड़ा और प्रतीक विकसित की हैं और उनका का यह कहना है कि इसके सेवन से शरीर को कोई नुकसान नहीं होता है। वर्षों से तिवड़ा की पारंपरिक खेती की तुलना में, ये दो किस्में स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार, तिवड़ा दाल खाने से लकवा होता है, यह सिर्फ एक गलत धारणा है। धान के बाद इसकी बेहतर फसल रायपुर सहित कवर्धा, बिलासपुर, मुंगेली, बेमेतरा, नवापारा

तालिका 1: विभिन्न स्थानों पर जर्मप्लाज्म स्थिति (Pandey *et al.*, 1997)।

स्रोत (Source)	प्रवेश (Accessions)
बेस कलेक्शन एनबीपीजीआर, नई दिल्ली में बनाए रखा गया	2563
एनबीपीजीआर, नई दिल्ली से योगदान	58
एनबीपीजीआर, नई दिल्ली से योगदान	146
आईजीकेवी, रायपुर से योगदान	2021
आईएआरआई, नई दिल्ली से योगदान	338
सक्रिय संग्रह	
एनबीपीजीआर, नई दिल्ली	300
एनबीपीजीआर, अकोला	146
आईजीकेवी, रायपुर	2600
आईआईपीआर, कानपुर	393





प्रयोगात्मक तिवड़ा फसल

आदि में ली जा रही है। छत्तीसगढ़ का तिवड़ा न केवल देश के अन्य राज्यों में जाता है, बल्कि इसकी विदेशों में भी मांग है।

तिवड़ा की मुख्य प्रजातियाँ

तिवड़ा की प्रजाति प्रतीक, 1999 में और महातिवड़ा, 2008 मे विकसित किया गई है। प्रतीक के पौधे 50–70 से०मी० उचाई के होते हैं। इसका बीज बड़े आकार और भूरा रंग का होता है, औसत उपज 1275 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर होती है। इसी तरह, महातिवड़ा के पौधे सीधे बढ़ते हैं, पत्ते गहरे हरे, गुलाबी फूल और बीज 8.0–9.0 ग्रा. वजन के होते हैं। इसकी उपज 1900 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक है। इसका उत्पादन मध्यम से भारी कन्हार भूमि में होता है।

प्रतिबंध का कारण

अंदेशा है कि तिवड़ा में हानिकारक पदार्थ बीटा–एन ऑक्सिलाइल 2–3 डाईएमिनो प्रोपिओनिक अम्ल (ओडीएपी) होता है, जिससे गठिया रोग, निचले कमर में लकवा तथा ग्वाइटर हो जाते हैं। बीटा–एन ऑक्सिलाइल 2–3 डाईएमिनो प्रोपिओनिक अम्ल यौगिक की मात्रा भिन्न होती है,जो जीनोटाइप और वातावरण के आधार पर बीज में 0.04 से 1.6% तक की विभिन्नता पायी गयी है (Tamburino *et al.*, 2012) और इसका महत्वपूर्ण मूल्य 0.2% से कम है (Abd El Moneim *et al.*, 2010)। तिवाड़ा के उपयोग में यह जहरीला यौगिक मुख्य सीमित कारक रहा है (Sharma *et al.*, 2000)। कृषि विश्वा–विद्यालय के वैज्ञानिकों की माने तो संतुलित मात्रा में तिवड़ा का सेवन करने से होने वाले रोग को लेकर कोई साक्ष्य सामने नहीं आया है। महातिवड़ा की नई प्रजाति विकसित करने वाले वैज्ञानिक ने बताया कि नई प्रजाति प्रतीक में हानिकारक तत्व की मात्रा नगण्य महज 0.07 से 0.08 प्रतिशत है।

तिवड़ा दाल का मुख्य उपयोग

तिवड़ा का उपयोग आमतौर पर दाल व बेसन के रूप में किया जाता है। अनुसंधान से यह प्रमाणित हो चुका है कि ओडीएपी की सबसे ज्यादा मात्रा तिवड़ा बीज के भ्रूण में पाई जाती है। दाल बनाने से भ्रूण और छिलका अलग हो जाने पर 43.0 प्रतिशत तक हानिकारक तत्व की मात्रा कम हो जाती है। दाल पकाने के पूर्व ठंडे पानी में भिगाकर, आधे घंटे के लिए रख दें और पकाने के पहले पानी को निथारने से हानिकारक तत्व कम हो जाता है। छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार और पश्चिम बंगाल राज्यों के अधिक क्षेत्रों में तिवड़ा की फसल, किसान पारंपरिक रूप से उगाते आ रहे हैं। इससे बीमारी होने के कोई साक्ष्य नहीं है। अनुसंधान के माध्यम से विकसित दोनों नई प्रजातियां बेहतर पैदावार के साथ प्रोटीन युक्त भी हैं।

तिवड़ा के पोषण, पोषक तत्व और औषधीय गुण

तिवड़ा कई उद्देश्यों की पूर्ति कर सकता है, जैसे कि यह पशु आहार, चारा तथा मानव भोजन के रूप में प्रयुक्त होता है। इसमे प्रोटीन की मात्रा बीज और परिपक्व पत्तियों में क्रमशः 18–34 प्रतिशत और 17 प्रतिशत पायी जाती है। तिवड़ा बीज प्रोटीनय एल्बमिन्स (14 प्रतिशत), ग्लोब्युलिन (66 प्रतिशत), ग्लूटेलाइन (15 प्रतिशत), और प्रोलमिन (5 प्रतिशत) से बना होता है। जबकि तिवड़ा से पशु चाराय आमतौर पर पीसा हुआ या दाल अनाज या आटे से बना होता है और मुख्य रूप से स्तनपान कराने वाले मवेशियों या अन्य बिना दूध देने वाले जानवरों को खिलाने के लिए उपयोग किया जाता है, मानव आहार में तिवड़ा को अनाज के रूप में शामिल किया जाता है जो उबला हुआ होता है और फिर या तो पूरी तरह से खाया जाता है या विभाजित दाल के लिए प्रसंस्करित किया जाता है। इसके अलावा, तिवड़ा मानव उपभोग के लिए अत्यधिक उपयुक्त है क्योंकि फैटी एसिड का 58 प्रतिशत पॉलीअनसेचुरेटेड होता है। इसमे पोषक तत्व–सघन, खाद्य/आहार फसल हेतु उपयुक्त और इसकी खेती के लिए न्यूनतम इनपुट आवश्यकताओं के साथ, उच्च सूखा–सहिष्णुता के रूप में, तिवड़ा कई कम–आय वाले समुदायों को भोजन और पोषण सुरक्षा प्रदान करता है।

न्यूट्रास्यूटिकल के रूप में, तिवड़ा एक संभावित "कार्यात्मक भोजन" का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। एमिनो एसिड L-homoarginine हृदय रोग उपचार और हाइपोक्सिया के परिणामों पर काबू पाने में, अर्थात, ऊतक स्तर पर अपर्याप्त ऑक्सीजन की आपूर्ति, कैंसर के विकास से जुड़ी कार्यो में लाभ प्रदान करता है। इस प्रकार, थोड़ी मात्रा में तिवड़ा के माध्यम से एल–होमोर्जिनिन का दैनिक आहार सेवन करना मानव स्वास्थ्य के लिए मूल्यवान हो सकता है और आगे के अध्ययन के लिए योग्य है।

प्रजाति सुधार के लिए अनुसंधान

तिवड़ा मे उपयुक्त प्रजनन नीतियों का प्रयोग कर, सामान्य फसल सुधार के लिए कई तनाव–सहिष्णु जीन के स्रोत के रूप में प्रयोग करने की संभावना है। उदाहरण के लिए, वांछनीय फिनोटाइप के साथ, दाता जर्मप्लाज्म का उपयोग नई प्रजनन सामग्री बनाने के लिए किया जा सकता है और उपलब्ध जीनोमिक उपकरणों (फास्ट फॉरवर्ड ब्रीडिंग) का प्रजनन प्रक्रिया को तेज करने के लिए लागू किया जा सकता है। हालांकि, अन्य दलहनी फसलों की तुलना में, तिवड़ा के जीनोमिक संसाधन अभी भी उपलब्ध नहीं हैं क्योंकि इसकी बड़ी जटिल (8.2–जीबी) जीनोम है। इसलिए, आज तक, फसल के आनुवंशिक सुधार के लिए बहुत सीमित शोध प्रयास

किए गए हैं। तिवड़ा मे द्विगुणित गुणसूत्र की संख्या 2n=14 होती है, इसके अलावा, इसकी बहुत धीमी प्रजनन प्रक्रिया भी होती है। ऐसा संभवतः आनुवंशिक परिवर्तनों की एक बहुत ही संकीर्ण सीमा, बहुधा–परागण और अंतर–असंगतता के कारण होती होगी। आनुवांशिक कटाव में वृद्धि इसकी आनुवंशिक विविधता को बनाए रखने के लिए एक चुनौती पेश करती है, जो सभी पौधों में सुधार के लिए आधार प्रदान करती है। इन सब के बावजुद भी तिवड़ा मे अनुसंधान की प्रक्रिया, भारतीय दलहन अनुसंधान संस्थान– कानपुर, एनबीपीजीआर, नई दिल्ली तथा इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय– रायपुर मे लगातार प्रयास चल रहा है और आने वाले दिनों मे बेहतर प्रजातियों का विकास होने की संभावना है।

संदर्भ

Abd El-Moneim, A.M., Nakkoul, H., Masri, S. and Ryan, J. (2010). Implications of zinc fertilization for ameliorating toxicity (Neurotoxin) in grasspea (*Lathyrus sativus*). J. Agr. Sci. Tech. 12: 69-78.

Ahmed, B., Sultana, M., Karim, M.R., Halder, T. and Rahman, M.M. (2014). Screening of grasspea (*Lathyrus sativus*) genotypes against salinity. Intl. J. Bio. Res. 17: 48-54.

Ambade, R.L., Verma, S.K., Nanda, H.C., Nair, S.K. and Verulkar, S.B. (2015). Genetic diversity based on molecular markers in Grasspea (*Lathyrus sativus* L.). Legume Research. 38(1): 43-46.

Arslan, M. (2017). Diversity for vitamin and amino acid content in grass pea (*Lathyrus sativus* L.). Legume Research. 40(5): 803-810.

Lambein, F., Travella, S., Kuo, Y.H., Van Montagu, M. and Heijde, M. (2019). Grass pea (*Lathyrus sativus* L.): orphan crop, nutraceutical or just plain food? Planta. 250: 821-838.

Pandey, R.L., Sharma, R.N. and Chitale, M.W. (1997). Status of Lathyrus Genetic Resources in India, Lathyrus Genetic Resources Network, Proceedings of a IPGRI-ICARDA-ICAR Regional Working Group Meeting. 8-10 December, 1997, New Delhi.

Sharma, R.N., Chitale, M.W., Ganvir, G.B., Geda, A.K. and Pandey, R.L. (2000). Observations on the development of selection criterion for high yield and low neurotoxin in grasspea based on genetic resources. Lathyrus Lathyrism News Letter. 1: 15-16.

Tamburino, R., Guida, V., Pacifico, S., Rocco, M., Zarelli, A., Parente, A. and Maro, A.D. (2012). Nutrional values and radical scavenging of grass pea (*Lathyrus sativus* L.) seeds in Valle Agricola district, Italy, Australian Journal of Crop Sciences. 6(1): 149-156.